मिजोरम में हिंदी के बढ़ते चरण

-प्रो. संजय कुमार

"हमें तो अपनों ने लूटा है, गैरों में कहाँ दम था।

मेरी कश्ती वहाँ डूबी, जहाँ पानी कम था।।"

आज़ादी के बाद भारत में राष्ट्रभाषा हिंदी के विकास की कहानी कुछ ऐसी ही रही है। मिजोरम जैसे पूर्वोत्तर भारत के कुछ राज्यों एवं दक्षिण भारत के कुछ राज्यों में हिंदी की दुर्गति कुछ ऐसी ही हुई। 1857 ई. के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की असफलता के बाद संपूर्ण राष्ट्र में हिंदी को भरपूर प्यार मिला। वह संपूर्ण राष्ट्र को एकता एवं अखंडता के एक सूत्र में पिरोने वाली भाषा के रूप में उभरी, जिसमें गुलाम भारत अपने सुख- दुख, हास्य- रुदन, हार जीत, स्वप्न और यथार्थ, गौरव और स्वाभिमान की सफल अभिव्यक्ति कर रहा था। इसलिए आधुनिक हिंदी साहित्य के प्रणेता बाबू भारतेंदु हरिश्चंद्र ने लिखा-

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।

बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय के शूल।"।

1947ई. तक लगातार चलने वाले राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान हिंदी ने जनजागृति फैलाने में अपनी महती भूमिका अदा की, जिसके कारण उस दौर के सभी महत्त्वपूर्ण भारतीय राजनेताओं ने एक स्वर में हिंदी के महत्त्व को स्वीकार किया। इसलिए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा- "हिंदी के बिना राष्ट्र गूंगा है।" आजादी के पूर्व राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान हिंदी ने अपने इस राष्ट्रीय दायित्व का निर्वहन सफलतापूर्वक किया और भारतीय जनता ने भी भरपूर प्यार, स्नेह, श्रद्धा, विश्वास और मान- सम्मान देते हुए उसे अपने हृदय के सर्वोच्च आसन पर राष्ट्रभाषा के रूप में विराजमान किया।

परंतु आजादी मिलते ही स्थितियाँ बदलने लगीं और राष्ट्रभाषा हिंदी क्षुद्र क्षेत्रीय राजनीति की शिकार हो गई। जब भारत का संविधान बना तो 14 सितंबर, 1949ई. को अनुच्छेद 343 के तहत हिंदी को राजभाषा का गौरव मुश्किल से मिल पाया और उसके पैरों में अंग्रेजी की बेड़ियाँ हमेशा के लिए डाल दी गई, जिस स्थान की वह एकछत्र अधिकारिणी थी। मिजोरम में हिंदी के विकास की कहानी कुछ इससे भिन्न नहीं है। मिजोरम में हिंदी को कई प्रकार की स्थानीय परिस्थितियों और चुनौतियों से दो चार होते रहना पड़ा है।

मिजोरम पूर्वोत्तर भारत के 8 राज्यों (7 बहनों और एक भाई) में से एक है। पूर्वोत्तर भारत के सबसे दक्षिण में अवस्थित यह भारत का अंतिम राज्य है। भौगोलिक दृष्टि से मिजोरम दो दिशाओं से दो भिन्न देशों- पूर्व एवं दक्षिण में वर्मा (म्यांमार) एवं पश्चिम में बांग्लादेश की अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं से घिरा हुआ है। तीन अन्य भारतीय राज्य - मणिपुर, असम और त्रिपुरा इसके उत्तर और पश्चिमोत्तर में अवस्थित हैं। मिजोरम की भौगोलिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और भाषाई विशिष्टता वहाँ हिंदी के प्रचार-प्रसार और

विकास को प्रभावित करती रही है। मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार एवं ऐतिहासिक विकास को पाँच चरणों में बाँट कर देखा और समझा जा सकता है।

1. अपरिचय का दौर (1890ई. तक)

2. प्रारंभिक परिचय का दौर (1890 से 1947ई. तक)

3. परिचय की प्रगाढ़ता का दौर (1947 से 1959ई. तक)

4. अविश्वास एवं दुराव का दौर (1959 से 1987ई. तक)

5. सहज विकास का दौर (1987ई. से अब तक)

अपरिचय का दौर (1890ई. तक):

भारत में एक कहावत अति प्रचलित है कि 'तीन कोस (लगभग 9 किलोमीटर) पर पानी बदले और नौ कोस (लगभग 27 किलोमीटर) पर वाणी (भाषा)'। यह कहावत केवल भारत पर ही नहीं बल्कि विश्व के अन्य भागों पर भी लागू होती है। विश्व में लगभग 195 देश हैं, जिनमें आज लगभग 6, 909 भाषाएँ बोली जाती हैं। विश्व भर में बोली जाने वाली कुल भाषाओं की लगभग एक चौथाई भाषाएँ भारत में बोली जाती हैं। इसलिए उपर्युक्त कहावत भारत पर ज्यादा सटीक साबित होती है। इस अर्थ में भारत बहु भाषी संस्कृतियों वाला देश है। मिजोरम की मिजो जनजातियाँ मिजो भाषा का प्रयोग करती हैं।

1750ई. के पूर्व मिजो जनजातियों के पूर्वज म्यांमार की लेनट्लाङ नदी और भारत म्यांमार की सीमा पर बहने वाली टियाउ नदी के बीच वाले चिन हिल्स वाले क्षेत्र में रहते थे। भयंकर आकाल और अन्य स्थानीय परिस्थितियां के दुष्परिणामों से बचने के लिए 1750ई. से लेकर 1850ई. के बीच विभिन्न मिजो जनजातियों द्वारा भारत और म्यांमार की सीमा पर बहने वाली टियाउ नदी को पार कर मिजोरम (भारत) के वर्तमान क्षेत्र में प्रवेश किया गया। इनके आगमन के पूर्व भी कुछ दूसरी जनजातियाँ यहाँ निवास करती थी, जिनके साथ इनका संघर्ष हुआ। मिजो जनजातियों के पूर्वजों ने उन्हें पराजित कर यहाँ से भागने पर मजबूर किया। तब ये जनजातियाँ मिजोरम छोड़कर उत्तर एवं पश्चिम की ओर बढ़ गई और तब से मिजो जनजातियाँ स्थाई रूप से यहीं बस गईं। हिंदी भाषा की मिजो विदुषी डॉ. सी.इ. जीनी अपनी पुस्तक 'पूर्वांचल प्रदेश में हिंदी भाषा और साहित्य' में लिखती हैं कि "वहाँ से 19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में भयंकर अकाल के कारण अपने मूल स्थान से चल पड़े और तत्कालीन श्रङखुल, बियते और थदो नाम की कमजोर जातियों को खदेड़ कर आज के मिजो क्षेत्र में स्थापित हो गए।"

विद्वानों की राय है कि 10 वीं से 13 वीं शताब्दी के बीच बर्मा में इरावती नदी की घाटी के छिन्लुङ (आदि नाम आऊपाताऊङ - Upataung) के प्रवास काल में ही वर्तमान मिजो भाषा का जन्म हुआ, जिसे

पहले लुशेई बोली कहा जाता था। वर्तमान में यह मिजो भाषा के नाम से जानी जाती है। 18 वीं शताब्दी और 19वीं शताब्दी में जब चिन हिल्स के छिन्लुङ नामक स्थान को छोड़ कर मिजो जनजातियों के पूर्वज वर्तमान मिजोरम में आए तो स्थानीय भाषा में इस अभियान को 'थ्लङ त्लाक' (Thlang Tlak) कहा गया। उस समय जातिगत आधार पर ये पाँच मुख्य दलों में बँटकर मिजोरम में आए थे। इन पाँच अलग-अलग जातियों के आधार पर ही मिजोरम की पाँच उपबोलियों का जन्म और विकास हुआ। ये जातियाँ और बोलियाँ निम्नलिखित हैं-

जाति बोली / भाषा (टोङ)

1. लुशेई / दुहलियान भाषा (स्नेमप / स्नोंप) लुशेई टोङ

2. राल्ते (त्सजम)- राल्ते टोङ

3. म्हार (भ्ठंत) - म्हार टोङ

4. पइहते (चंपीजम) पइहते टोङ

5. पोइ (चूप) पोइ टोङ

मिजोरम में रहने वाली मिजो जनजातियाँ आज मिजो भाषा का इस्तेमाल करती हैं। विद्वानों ने मिजो भाषा को तिब्बती- बर्मन भाषा परिवार से सम्बन्ध माना है। परंतु इसकी भाषाई प्रकृति का गहन अध्ययन करने से इसकी उत्पत्ति की पृष्ठभूमि में उपर्युक्त पाँच स्थानीय बोलियों का महत्त्वपूर्ण योगदान परिलक्षित होता है- दक्षिणी मिजोरम में रहने वाली लाइ जाति की भाषा 'लाइ टोङ', म्हार जाति द्वारा बोली जाने वाली 'म्हार टोङ', उत्तर पूर्वी मिजोरम के पाइहते जातियों द्वारा बोली जाने वाली 'पाइहते टोङ', राल्ते उपजतियों की भाषा 'राल्ते टोङ' और 'लुशेई टोङ' या 'दुहलियान टोङ', जो मिजोरम की सर्वप्रमुख संपर्क भाषा तथा राजभाषा 'मिजो टोङ' का प्रमुख आधार मानी जाती है। जहाँ उपयुक्त प्रथम चार बोलियों का पहले से अपना अलग-अलग प्रसार क्षेत्र था, वहीं 'दुहलियान टोङ', जिसे लुशेई भाषा भी कहा जाता है, का अपना कोई विशेष प्रसार क्षेत्र नहीं था। कमोबेश यह संपूर्ण मिजोरम में थोड़ी बहुत बोली और समझी जाती थी। आरंभ में लुशेई भाषा केवल मौखिक रूप अर्थात् बोली तक ही सीमित थी। परंतु नित्य बढ़ते अपने शब्द भंडार और प्रयोगकर्ताओं की बढ़ती जनसंख्या के अनुपात में ही लुशेई बोली परिपक्व होती गई। अतः अपने प्रारंभिक काल से ही यह बोली अन्य जातियों और उपजातियों के मध्य संपर्क भाषा बन गई। परंतु लिपि के अभाव के कारण मिजो जातियों और उपजातियों के मध्य प्रचलित संपर्क भाषा होते हुए भी यह तीव्र गति से उन्नति नहीं कर पाई।

कालांतर में बदलती हुई राजनीतिक सामाजिक परिस्थितियों में सभी मिजो जनजातियों ने एक सामान्य संपर्क भाषा की आवश्यकता महसूस की। इसलिए उन्होंने अपनी- अपनी भाषाओं की विशेषताओं एवं शब्दावलियों को मिलाकर एक नई संपर्क भाषा की आधारशिला रखी, जिसे मिजो भाषा कहा गया। वर्तमान में प्रयुक्त मिजो भाषा में उपर्युक्त सभी 5 भाषाओं के शब्द पाए जाते हैं। मिजो भाषा की एक विशेषता

यह भी है कि एक ही शब्द उच्चारण की भिन्नता, गेयता और बलाघात के आधार पर अलग- अलग अर्थ प्रदान करते हैं। मिजो भाषा प्रारंभ से ही मौखिक रही है क्योंकि इसकी कोई अपनी लिपि नहीं थी। इसलिए इसमें 19वीं शताब्दी तक लिखित साहित्य का एकदम से अभाव रहा है। यद्यपि मिजो भाषा में लोक साहित्य (लोककथाओं एवं लोकगीतों आदि) रचना की पुरानी परंपरा रही है, जिसे अब विद्वान संगृहीत एवं संपादित कर प्रकाशित करा रहे हैं। इनका अब कुछ अनुवाद भी अंग्रेजी एवं हिंदी में प्रकाशित हुआ है।

परंतु उस दौर में मिजोरम में रहने वाली मिजो जनजातियों का कोई विशेष संपर्क विश्व या भारत के शेष हिस्सों से नहीं था। आवागमन के साधनों के अभाव, सड़कों एवं मार्गों की अनुपस्थिति, सदाबहार वर्षा वनों की सघनता, वनों में हिंसक जीवों की उपस्थिति, मिजो जनजातियों का सभ्यता के विकास के प्रारंभिक अवस्था में होना, शेष विश्व से संपर्क की उनकी अनिच्छा और उनका हिंसक व्यवहार और 'हेड हंटर' (सिर काटने वाली) जनजाति का होना, प्रकृति पर उनकी अत्यधिक निर्भरता, अपने प्राकृतिक आवास में संतुष्ट होना आदि प्राकृतिक, भौगोलिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक कारणों से मिजोरम संपूर्ण भारत के लिए एक दुरूह स्थान था, जिसके दरवाजे सभी के लिए बंद थे। ऐसे में मिजोरम के दरवाज़े किसी भी हिंदी भाषा भाषी के लिए भी बंद थे और मिजो जनजाति किसी दूसरे से मिलने को इच्छुक ही नहीं थी। इन परिस्थितियों का स्वाभाविक परिणाम था अपरिचय और दूरी। इन परिस्थितियों में मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार का तो सवाल ही नहीं उठता है क्योंकि बिना संपर्क के संपर्क भाषा या माध्यम भाषा की आवश्यकता ही नहीं होती है और मिजो जनजातियाँ आपसी संपर्क में मिजो भाषा का प्रयोग करती हुई शेष विश्व से कटकर मिजोरम में एकांतवास कर रही थी। संपूर्ण ऐतिहासिक साक्ष्य इसी बात की ओर इशारा करते हैं।

प्रारंभिक परिचय का दौर (1890 से 1947ई. तक):

1890ई. के बाद मिजो जनजातियों की हिंसक गतिविधियों एवं बदलती हुई राजनीतिक परिस्थितियों में जब अंग्रेजों ने मिजोरम में प्रवेश किया और यहाँ के सभी ग्राम प्रमुखों या मुखियाओं (लल) को पराजित कर संपूर्ण मिजोरम को ब्रिटिश साम्राज्य का हिस्सा बना लिया। डॉ. सी.इ. जीनी अपनी पुस्तक 'पूर्वांचल प्रदेश में हिंदी भाषा और साहित्य' में लिखती हैं कि "मिजो लोगों ने अपनी सामरिक गतिविधियों को समीप के सिलल्त, कछार और चटगाँव के पहाड़ी क्षेत्रों तक विस्तार प्रदान किया। सन् 1871-72ई. में मिजो जाति ने कछार के चाय बागानों तक अपना धावा बोला, जिसमें उन्होंने अनेक लोगों को मारने के साथ-साथ एक अंग्रेज कन्या का अपहरण भी कर लिया। परिणामस्वरूप अंग्रेजी सेना ने आपराधिक गतिविधियों को दबाने के लिए मिजो पहाड़ियों में प्रवेश किया, जिसके कारण कुछ समय के लिए मिजो जनों ने अपनी गतिविधियों को रोक दिया। 1890ई. में मिजो जनों ने अंग्रेजों की किलाबंदी आइजेल (आइजोल) और चाङसिल पर धावा बोल दिया। प्रत्युत्तर में अंग्रेजों ने करारा जवाब दिया और 1891 ई. में मिजो क्षेत्र को दो जिलों में विभाजित कर उत्तरी लुशाइ हिल्स को असम और दक्षिणी लुशाइ हिल्स को बंगाल में मिला

दिया। 1892 में पुनः मिजो विद्रोह उभरा, जिसे अंग्रेजों ने बुरी तरह कुचल दिया। यह ब्रिटिश शासन काल का अंतिम मिजो विद्रोह था।"

बाद में साम्राज्यवाद की छतरी तले ईसाई मिशनरियों का आगमन मिजोरम में हुआ। 1894ई, में ईसाई धर्म प्रचार के लिए दो अंग्रेज ईसाई मिशनरी रेवरेंड जे.एच. लॉरेन और रेवरेंड एफ. डब्ल्यू, सेविज मिजोरम आए। उन्होंने मिजोरम के मिजो जनजातियों में ईसाई धर्म का प्रचार प्रारंभ किया। इस प्रकार साम्राज्यवादी शक्ति अंग्रेजों के मिजोरम में प्रवेश से मिजोरम का द्वार शेष विश्व के लिए खुला और मिजो जनजातियाँ विश्व की दूसरी जातियों के संपर्क में आयीं और तब उनमें बदलाव का एक नवीन दौर प्रारंभ हुआ।

आगे चलकर अन्य अंग्रेज ईसाई मिशनरी भी मिजोरम (भारत) आए और उन सब लोगों ने मिलकर ईसाई धर्म प्रचार में अपना अपना योगदान दिया। डॉ. सी.इ. जीनी लिखती हैं कि "बाद में वहाँ ईसाई धर्म प्रचार के वास्ते दो मिशन स्थापित हुए- बैपटिस्ट मिशन (11.01.1894) और वेल्श प्रेसबेटेरियन मिशन (31.08.1897)।" इन ईसाई मिशनरियों के सहयोग और ब्रिटिश साम्राज्यवादी छल- कल- बल के जोर से बड़े पैमाने पर मिजोरम के मिज़ो जनजातियों का ईसाई धर्म में धर्मांतरण कराया गया। परिणाम यह हुआ कि 1890ई. तक संपूर्ण विश्व से कट कर मिजोरम के जंगलों में एकाकी जीवनयापन करने वाली अधिकांश मिजो जनजातियों का 1947ई. तक आजादी के आते आते ईसाई धर्म में धर्मांतरण हो चुका था। केवल ब्रू एवं चकमा जैसी कुछ जनजातियाँ ही इससे आआंशिक रूप से अछूती बचीं। ईसाई धर्म में धर्मांतरण के बाद मिजो जनजातियों ने अपनी परंपरागत संस्कृति, धार्मिक विश्वासों एवं रीति रिवाजों को जाने या अनजाने में त्यागना प्रारंभ कर दिया, जिसमें कहीं न कहीं उनके नए धर्म और उनके संगठनों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है, जिसे आज कोई स्वीकार नहीं करना चाहता है।

प्रारंभिक दौर में धर्म प्रचार के दौरान ईसाई मिशनरियों को भाषाई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। धर्म प्रचार हेतु ईसाई धर्म के एकमात्र पवित्र ग्रंथ 'बाइबिल' का मिजो भाषा में अनुवाद और उसका प्रकाशन जरूरी था। इसलिए उपर्युक्त दोनों ईसाई मिशनरियों ने 1894 से 1896ई. के बीच रोमन लिपि में आवश्यकतानुसार कुछ हेरफेर कर मिजो भाषा (लुशेई) को लिपिबद्ध किया। इन्होंने मिजो भाषा को लिखने के लिए रोमन लिपि पर आधारित एक लिपि विकसित की।

मिजो भाषा को लिखने में निम्न स्वरों और व्यंजनों का उपयोग किया जाता है:

A (अ/आ),AW(ओ), B(बी), CH (चो), D(दी), E(ए), F(एफ), G(जी/एक), NG (एङ), H(एच), I(इ/ई), J(जे), K(के), L (एल), M (एम), N(एन), O(ओड), P(पी), R (आर), S (एस), T(ती), T(टी), U(उ/ऊ), V(बी) और Z (जे)। (कुल 25)5

पुनः अप्रैल 1898ई. में ईसाई मिशनरियों के द्वारा मिजोरम के सबसे पहले स्कूल (मिशन) की स्थापना आईजोल में की गई और एक विषय के रूप में मिजो भाषा के अध्ययन-अध्यापन का दौर प्रारंभ हुआ। परिणाम स्वरुप सैकड़ों वर्षों तक लिपि विहीन रहने वाली मिजो भाषा का विकास कार्य तीव्र गति से होने लगा। रोमन लिपि की वर्णमाला के अनुसार ही इस भाषा की लिपि को भी निर्मित किया गया। अंग्रेजी

मिशनरियों द्वारा मिजो भाषा और रोमन लिपि के माध्यम से शिक्षा और धर्म का प्रचार-प्रसार किया जाने लगा। ईसाई धर्म के प्रचार हेतु 'बाइबिल' एवं अन्य धार्मिक ग्रंथों का मिजो भाषा में सर्वप्रथम अनुवाद किया गया। डॉ. सी. इ. जीनी अपनी पुस्तक 'पूर्वाचल प्रदेश में हिंदी भाषा और साहित्य' में लिखती हैं कि "स्थानीय लोगों को उनकी अपनी मातृभाषाओं में धर्मप्रचार करने अपने मूल सिद्धांत के अंतर्गत इन मिशनरियों ने तब तक लिपि रहित और मौखिक रूप में ही प्रचलित मिजो भाषा को 1894ई. में रोमन लिपि प्रदान की और बाइबिल को मिजो भाषा में अनुदित किया। मिजो भाषा में प्रस्तुत बाइबिल को मिजो भाषी पढ़ सकें तथा ईसाइयत को अपना सकें, इस उद्देश्य से मिजो लोगों को साक्षर बनाने की आवश्यकता (मिशनरियों को) महसूस हुई और तब उन्होंने मिजोरम में सन् 1903ई. में प्राइमरी स्कूल खोल दिए। तब तक निरक्षर मिजो जाति भी क्रमशः अधिक संख्या में खुलते गए। स्वाधीनता के पहले तक इन सारे स्कूलों को प्राइमरी और मिडिल परीक्षाएँ मिशन ही संचालित कर प्रमाणपत्र वितरित करता रहा। मैट्रिक की परीक्षा विश्वविद्यालय द्वारा ही ली जाती थी।"

लिपिबद्ध होने के कुछ वर्षों के भीतर ही मिजो भाषा प्रारंभिक शिक्षा का माध्यम भी बन गई। उससे इस भाषा के विकास क्रम को अपेक्षाकृत तेज गति प्राप्त हुई। तब से ही मिजो भाषा में अध्ययन, अध्यापन एवं लेखन का दौर प्रारंभ हुआ और तब से ही मिजो भाषा का लिखित साहित्य प्राप्त होता है। 22 अक्टूबर 1896 ई. को मिजो भाषा में लिखित प्रथम पुस्तक 'मिजो जिर तिर बु' (Mizo Zir Tir Bu) का प्रकाशन हुआ। इस प्रकार कहा जा सकता है कि मिजो भाषा के लिखित साहित्य का इतिहास कुल जमा सवा सौ सालों का है और वह भी अंग्रेजों के मिजोरम आगमन और मिजो जनजतियों के ईसाई धर्म को अपनाने के बाद का है। ईसाई धर्म, मिजो भाषा हेतु रोमन लिपि का इस्तेमाल और आधुनिक जीवन शैली एवं सभ्यता से परिचित करवाने हेतु मिजो समाज ब्रिटिश साम्राज्य एवं ईसाई मिशनरियों का आभारी है, जिसकी अभिव्यक्ति प्रायः सभी मिजो विद्वान खुलेआम करते हैं। डॉ. सी.इ. जीनी अपनी पुस्तक 'पूर्वांचल प्रदेश में हिंदी भाषा और साहित्य' में लिखती हैं कि "सन् 1910ई. ई. में जाकर पृथक मिजो मैट्रिक पास कर पाया। सन् 1924ई. में पृथक मिजो बना तो 1945ई. में दूसरा मिजो पहली बार एम.ए. पास कर सका। इसे एक सुखद विस्मयकारी घटना ही मानेंगे कि जो जाति सदैव से निरक्षर रही, वह इतने अल्पकाल में अधिक साक्षर बनी तथा अपनी शिक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ और वैज्ञानिक बनाने में एक नया कीर्तिमान स्थापित करने में सफल हुई। इस आश्चर्यजनक सफलता का श्रेय जहाँ एक ओर मिजो जाति की लगनशीलता को मिलना चाहिए वहीं दूसरी ओर ईसाई मिशनरियों के अनवरत प्रयास को भी।"

1890ई. में अंग्रेजों के मिजोरम में प्रवेश के बाद यहाँ काल की गति काफी तेज़ हो गई और मिजो जनजातीय समाज तेजी से परिवर्तित होने लगा। मानव सभ्यताओं के इतिहास में जो चीजें हजारों सालों में घटित हुई. मिजोरम में वह सभी कुछ एक सौ सालों में घटित हो गया। अंग्रेजों और ईसाई मिशनरियों की प्रेरणा से मिजो जनजातियों ने पश्चिम की आधुनिक जीवन शैली को एक झटके में पूरी तरह से अपना लिया।

अंग्रेजों ने जब मिजोरम में प्रवेश किया तब वे अकेले नहीं थे। अंग्रेज अधिकारियों के साथ बड़ी संख्या में हिंदी बोलने वाले हिंदुस्तानी सैनिक और कर्मचारी भी थे। इस प्रकार मिजो जनजातियों का अंग्रेजी बोलने वाले अंग्रेजों के साथ-साथ हिंदी बोलने वाले सैनिकों और कर्मचारियों से भी संपर्क हुआ। यद्यपि अंग्रेज अधिकारी अंग्रेजी भाषा को प्रश्रय देते थे। परंतु व्यावहारिक स्तर पर हिंदी बोलने वाले सैनिकों एवं अन्य कर्मचारियों से मिजो जनजातियों का ज्यादा संपर्क हो रहा था, इस प्रकार हिंदी भाषा का प्रथम संपर्क मिजो जनजातियों से हुआ और सांस्कृतिक एवं भाषाई आदान- प्रदान की प्रक्रिया प्रारंभ हुई, जिससे मिजो जनजातियाँ हिंदी भाषा से परिचित हुई। आगे चलकर मिजो जनजातियों ने यह महसूस किया कि अंग्रेज मालिक हैं और हिंदुस्तानी सैनिक उनके नौकर या गुलाम। इस सामाजिक और राजनीतिक बोध ने इन दोनों जातियों की भाषाओं के प्रति उनके नजरिए को बदल दिया। उनकी दृष्टि में अब अंग्रेजी मालिकों की भाषा थी तो हिंदी गुलामों और नौकरों की। इसलिए मिजो जनजातियों ने विजेताओं की भाषा अंग्रेजी को बढ़ावा देने की साम्राज्यवादी शक्ति की चाल को सहर्ष स्वीकार कर लिया और उसे अपने हृदय से लगा लिया। हिंदी अपने देश की भाषा होकर भी गुलामों की तरह परित्यक्त रही। अंग्रेजों की इस चाल को चुनौती देने वाला उस समय मिजोरम में कोई नहीं था। क्योंकि मिजोरम उस समय तक राजनीतिक, सामाजिक या सांस्कृतिक किसी भी रूप में भारत से अपने को जुड़ा हुआ महसूस नहीं करता था। हिंदी भाषा के मिजो विद्वान श्री सी. कामलोवा अपने आलेख 'मिजोरम में हिंदी सोच की दरिद्रता' में इस मानसिकता को उजागर करते हुए लिखते हैं- "1880-90ई. के दशक में अंग्रेज इस प्रदेश में आए। इससे पहले किसी बाहरी व्यक्तियों से मिजो जनजातियों का व्यापक सम्बन्ध नहीं के बराबर था। अंग्रेजों के साथ कुछ भारतीय मूल के लोग भी थे, परंतु उनमें अंतर था। अंग्रेज आका थे, अन्य उनके गुलाम। मिजो जनजातियों में दो बातें घर कर गईः (क) गोरे आका हैं, मालिक हैं। सम्मानित जीवन जीते हैं। (ख) उनके साथ आए अन्य लोग उनके मातहत काम करने वाले नौकर चाकर। आगे चलकर उन्हें इस सच्चाई का भी पता चला कि हिंदुस्तानी अंग्रेजों के नौकर ही नहीं, गुलाम भी हैं। परिणाम में दो नए शब्द स्थानीय लोगों की भाषा में स्वतः जुड़ गए 'साप' और 'वाई'। 'साप' (साहब का नेपाली उच्चारण) अर्थात् 'साहब' 'मालिक', 'वाई' अर्थात् 'हिंदुस्तानी' जो साहब लोगों के अधीन हैं। दोनों कौमों की भाषा के प्रति मान-सम्मान की सीमा- रेखा का निर्धारण भी इसी के अनुपात में किया गया। आगे चलकर ईसाई मिशनरियों के कार्य ने इस सीमा रेखा को और भी पुष्ट किया।"

"जातीय बंधन से मुक्त मिजो जनजातियों में किसी दो कौमों को लेकर इस प्रकार की सोच की असमानता पहले कभी नहीं उपजी थी। अतः अपनी रीतियों के साथ स्वच्छंद जीवन बिताने वाले जनजातियों में अंग्रेजी भाषा के प्रति रुझान और हिंदी भाषा के प्रति उदासीनता का बीजारोपण भी इन्हीं परिस्थितियों के कारण हुआ।" स्पष्ट है कि इस मानसिकता ने उस दौर में और उसके बाद भी मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार को संकुचित किया। फिर भी इन ऐतिहासिक परिस्थितियों ने हिंदी की पहुँच मिजो जनजातियों तक बनाई और हिंदी के कुछ शब्दों का प्रयोग मिजो जनजातियों के लोगों द्वारा आपसी दैनिक व्यवहार में किया जाने लगा।

परिचय की प्रगाढ़ता का दौर (1947 से 1959ई. तक):

1947 में भारत को आजादी मिलने के बाद अंग्रेजों के समय से चली आ रही राजनीतिक व्यवस्था की तरह ही मिजोरम को असम राज्य के अंतर्गत एक जिला के रूप में रखा गया और तब उसका नाम 'लुशाई हिल्स डिस्ट्रिक' था। तब मिजोरम में हिंदी का प्रचार-प्रसार परिचय की प्रारंभिक अवस्था से आगे बढ़ा। असम राज्य की राजधानी गौहाटी थी। सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों की नियुक्ति वहीं से होती थी। नियुक्तियों में ज्यादातर असम, बंगाल, पूर्वी भारत और नेपाल के लोगों की नियुक्तियाँ होती थीं। ये सभी अधिकारी और कर्मचारी हिंदी जानते और बोलते थे। प्रतिदिन के प्रशासनिक कार्यों में मिजोरम की जनता का सामना इन अधिकारियों और कर्मचारियों से होता था, जिससे उनका परिचय हिंदी से भी होता था। बदली हुई राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों में मिजोरम की जनता को अब बाहर खासकर सिलचर और गौहाटी भी जाना पड़ता था, ऐसे में संप्रेषण हेतु उन्हें हिंदी की आवश्यकता महसूस होती थी क्योंकि मिजोरम से बाहर उनकी मातृभाषा- लुशाई / मिजो कोई नहीं जानता था। मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार में इन सरकारी कर्मचारियों के अलावा भारतीय सैनिकों, व्यापारियों एवं मजदूरों की भी महती भूमिका रही है। भारतीय सेना के ज्यादातर सैनिक हिंदी भाषा भाषी थी। इसलिए जहाँ- जहाँ उनके मुख्यालय और कैंप थे, वहाँ वहाँ उनका संपर्क आसपास के स्थानीय मिजो लोगों से होता था। इस प्रकार आपसी बातचीत से धीरे-धीरे मिजो लोग हिंदी जानने और समझने लगे।

मिजोरम में पहले कोई उद्योग धंधा नहीं था। मिजो समाज अपनी जरूरतों के लिए प्रकृति पर निर्भर था। परंतु मिजोरम में अंग्रेजों के प्रवेश से सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियाँ तेजी से बदलने लगी। अंग्रेजों के जाने और आज़ादी के बाद इन परिस्थितियों में और भी तेजी से बदलाव आया। भारत के चतुर और साहसिक व्यापारी मिजोरम के दुर्गम स्थानों पर भी व्यापार के लिए पहुँचने लगे। व्यापारियों की मदद के लिए मजदूर और कुली भी यहाँ पहुँचे। यह प्रक्रिया आज़ादी के पूर्व से ही प्रारंभ हो गई थी। आजादी के बाद इस प्रक्रिया में और ज्यादा गति आई। हिंदी भाषा भाषी इन व्यापारियों, मजदूरों और कुलियों ने भी मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इनके संपर्क में आकर मिजोरम के सुदूर क्षेत्रों के मिजो लोग भी हिंदी भाषा से थोड़ा बहुत परिचित होने लगे।

दिन- प्रतिदिन के मेलजोल के लिए दोनों तरफ के लोगों के लिए एक दूसरे की भाषा को जानने और सीखने की मजबूरी थी। बाहरी लोग धीरे-धीरे स्थानीय भाषा- मिजो सीखने लगे और मिजो लोग हिंदी सीखने लगे। इस अंत: निर्भरता ने मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार को गति प्रदान की। उस समय तक मिजो जनजातीय समाज के साथ-साथ मिजो भाषा बहुत विकसित नहीं थी। मिजो भाषा में बहुत कम शब्द थे। जिससे अभी तक उनका काम चल जा रहा था। पर बदलती हुई परिस्थितियों में मिजो समाज में बहुत तेजी से परिवर्तन हो रहा था। इसलिए जिन वस्तुओं और भावों के लिए मिजो भाषा में शब्द नहीं थे, उसे मिजो समाज ने अंग्रेजी या हिंदी से सीधे सीधे अपना लिया। इस प्रकार सैकड़ों हिंदी शब्दों का मिजो भाषा में प्रवेश हुआ। उदाहरणार्थ निम्न शब्दों को देखा जा सकता है:

हिंदी मिजो डप्रव

चौका / रसोईघर चौका Choka

बादाम / मूँगफली बादाम Badam

मटर / चना चाना Chana

आलू / आलू A lu

दाल / दाल Dal

चीनी / चीनी Chini

मिच / मरचा Hmarcha

मूली / मूला Mula

पाव/ पावापावा Pava

सरकार / सोरकार Sawrkar

बड़ा साहब / बोड़ साप Bawrh Sap

किताब / कॉपी लेखा cq Lehkhabu

रंग / रौंग Rawng

बोरा / बोरा Buara

यहाँ यह ध्यान देने की बात है कि आज़ादी के पहले अंग्रेजों के साथ और आज़ादी के बाद स्वतंत्र रूप से असम, बंगाल और नेपाल के गोर्खाली लोग ही अधिकतर मिजोरम आए थे। इसलिए मिजो जनजातियों का हिंदी से पहला परिचय इन्हीं लोगों के माध्यम से हुआ। असम, बंगाल और नेपाल के गोर्खाली लोग जिस प्रकार हिंदी का उच्चारण करते थे मिजो जनजाति के लोगों ने उसी प्रकार मिजो भाषा में उसे अपना लिया और उसका उच्चारण भी कमोबेश उसी प्रकार करने लगे। तो कुछ शब्दों में परिवर्तन भी देखने को मिलता है।

आज्जादी के बाद 14 सितंबर, 1949ई, में हिंदी को राजभाषा का दर्जा दिया गया। 26 जनवरी, 1950ई. को भारतीय संविधान लागू हुआ. जिसमें हिंदीतर प्रांतों में राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार का भी संकल्प लिया गया था। अपने संवैधानिक प्रावधानों के तहत केंद्र और राज्य सरकारों ने भी मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए कार्य किए। आजादी के बाद मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार को गति प्रदान करने के लिए 'असम राष्ट्र भाषा प्रचार समिति', गौहाटी, असम, 'राष्ट्र भाषा हिंदी समिति', वर्धा, महाराष्ट्र और केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा सक्रिय थीं। 'असम राष्ट्र भाषा प्रचार समिति', गौहाटी के अंतर्गत 17 नवंबर, 1954ई.

को 'जौरम हिंदी प्रचार समिति' की स्थापना कोलासिब शहर में की गई। आजादी के बाद प्रारंभिक दौर में 'लुशाई हिल्स डिस्ट्रिक' में हिंदी के प्रचार-प्रसार का गुरुतर दायित्व ये ही संस्थाएँ उठा रही थीं। "लुशाई हिल्स डिस्ट्रिक' में 1952ई. में स्कूली पाठ्यक्रम के अंतर्गत एक विषय के रूप में हिंदी को स्थान दिया गया। मिजोरम में हिंदी के प्रारंभिक प्रचारकर्ताओं में श्री सेलेतथङा और श्री देङछुङा का नाम अमर है। मिजोरम में हिंदी के प्रचार में इनके ऐतिहासिक योगदान का उद्घाटन करती हुई डॉ. सी. इ. जीनी लिखती हैं- "हिंदी प्रचार के अग्रदूत माने जाने वाले सर्वश्री सेलेतथङा और देङछुङा उस समय असम सरकार द्वारा तीताबारी में संचालित एकवर्षीय हिंदी शिक्षण प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में दीक्षित होकर मिजोरम लौट आए और तदुपरांत स्कूलों में पढ़ने वाले मिजो लड़के लड़कियों को हिंदी सिखाने का कार्य करने लगे।"

"इन दोनों अग्रणी हिंदी शिक्षक प्रचारकों के निरंतर प्रयास स्वरूप उस समय के स्कूली छात्र-छात्राओं के अतिरिक्त वयस्क लोग भी हिंदी पढ़ने लगे। उन वयस्कों में से कुछ असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहटी द्वारा संकलित (संचालित) हिंदी की प्रारंभिक परीक्षाओं में बैठते और उनमें उत्तीर्ण होते रहे। उन्हीं दिनों उनमें से कुछ अधिक उत्साही मिजो युवा असम सरकार द्वारा संचालित मिसामारी केंद्र में हिंदी शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम पास करने में सफल रहे। इस तरह सीमित (संख्या में) और केंद्र की परीक्षाओं में सफल व्यक्ति असम सरकार द्वारा मिजो जिले के स्कूलों में हिंदी अध्यापक नियुक्त होते रहे और अपने- अपने विद्यालयों में असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा प्रकाशित पाठ्य पुस्तकों की सहायता से हिंदी पढ़ाते रहे।" 10 हिंदी के प्रारंभिक प्रचारकर्ताओं में एक अन्य महत्त्वपूर्ण नाम श्री वी. एल. ङाहका का भी है। 1954ई. से आप हिंदी प्रचारक का कार्य कर रहे थे। 1956-1957ई. में आप बेसिक टीचर ट्रेनिंग संस्थान में हिंदी शिक्षक नियुक्त हुए। और मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार के कार्य को आगे बढ़ाया।

यहाँ यह भी ध्यान देने वाली बात है कि मिजोरम में हिंदी के ज्यादातर प्रचारक और शिक्षक स्थानीय मिजो भाषा भाषी थे। मिजोरम में हिंदी के प्रचार में स्थानीय मिजो भाषा भाषी लोगों के ऐतिहासिक योगदान को रेखांकित करती हुई डॉ. सी.इ. जीनी उल्लास से लिखती हैं- "यह जानकर भी आनंद की अनुभूति होती है कि एकाध अपवाद को छोड़कर सभी विषयों के शिक्षक मूलतः मिजो वासी हैं।" इसी बात को श्री सी. कामलोवा बहुत जोर देकर दावे के साथ कहते हैं कि- "मिजो जनजातियों में कई लोग ऐसे थे जो टूटी- फूटी ही सही, हिंदी बोलते समझते थे और इसे व्यवहार में लाते थे। इसका यह अर्थ नहीं कि उस समय कोई हिंदी प्रेमी इस प्रदेश में आया होगा, नहीं। मिजोरम ही क्यों, समूचे राष्ट्र के पास ऐसा कोई सबूत नहीं है जिसके सहारे यह कहा जा सके कि अतीत में किसी हिंदी प्रेमी के पाँव इसके प्रचार-प्रसार के लिए इस प्रदेश पर पड़े थे।"

"समूचे राष्ट्र की आत्मवाहिनी हिंदी बेचारी तो अपनों की अवहेलना के दर्द की मारी यों ही रोती भटकती इस प्रदेश के चौखट पर आ पहुँची थी जिसे कुछ पुराने सैनिकों और पढ़े लिखे लोगों ने पनाह दी थी। "

सच चाहे जो भी हो पर ये वे परिस्थितियाँ थीं जिन्होंने आज़ादी के बाद मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार को गति प्रदान की और मिजो समाज का हिंदी से परिचय को प्रगाढ़ बनाया।

अविश्वास एवं दुराव का दौर (1959ई. से 1987ई. तक):

पूर्ण राज्य बनाने के पूर्व मिजोरम आज़ादी के बाद से ही असम राज्य का एक जिला मात्र था। मिजो विद्वानों का आरोप है कि उस समय असम के सरकारी तंत्र के द्वारा सभी मामलों में मिजोरम की जनता की आशाओं एवं आकांक्षाओं की उपेक्षा की जाती थी। इन्हीं परिस्थितियों में 1959-60ई. में मिजोरम में भयानक अकाल पड़ा। सामान्यतः मिजोरम में प्रति 50 वर्षों के बाद बाँस फूलते हैं और उसमें फल लगते हैं। बाँसों के बीजों को खाकर चूहों की प्रजनन क्षमता बहुत बढ़ जाती है, जिससे उनकी आबादी में तेजी से वृद्धि होती है। बढ़ी हुई संख्या के साथ चूहों की फौज अपनी भूख मिटाने के लिए गाँवों एवं घरों में रखे हुए अनाजों के भंडारों पर धावा बोलती है और उन्हें चट कर जाती है। अनाजों की कमी के कारण भुखमरी की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और अकाल पड़ता है। 1959-60ई. में मिजोरम में पड़े भयानक अकाल में हुए अपार जान माल की क्षति एवं असम सरकार की संवेदनहीनता और मिजोरम के लोगों की उपेक्षा ने मिजोरम के लोगों के मन में आक्रोश एवं विद्रोह का भाव भर दिया। परिणामस्वरूप 'मिजोरम नेशनल फेमाइन फ्रंट' (1959ई.) नामक मोर्चा बनाकर मिजोरम की जनता ने सरकारी नीतियों की कटु आलोचना प्रारंभ की। आगे चलकर यह आक्रोश विरोध एवं विद्रोह में बदल गया।

उन्हीं दिनों असम राज्य की नई भाषा नीति सामने आई। असमिया भाषा को असम राज्य की राजभाषा घोषित किया गया, जिसका असम राज्य के गैर असमिया भाषी सीमांत क्षेत्रों ने विरोध किया। डॉ. सी.इ. जीनी अपनी पुस्तक में इस घटना और उसके प्रभाव का उल्लेख करती हुई स्पष्ट लिखती हैं कि "सन 1960ई. में असम सरकार असमिया भाषा को राज्य की सरकारी भाषा बनाने के लिए विधान सभा में विधयेक ले आई। यद्यपि इस विधयेक का मंतव्य राज्य में बसे बंगालियों को असमिया की अस्मिता स्वीकार कराना था, परंतु पर्वतीय जातियों ने आशा के विपरीत यह अनुभव किया कि असमिया को उन पर लादने का यह एक षड्यन्त्र है। गारो नेता श्री विलियमसन संगमा ने असम मंत्रिमंडल की सदस्यता से अपना त्यागपत्र दे दिया। पर्वतीय नेताओं की शिलॉन्ग में एक बैठक आयोजित की गई, जिसमें सभी राजनीतिक दलों के नेता सम्मिलित हो गए। परिणामस्वरूप सर्वदलीय पर्वतीय सम्मेलन (आल पार्टी हिल्स लीडर्स) का शुभारंभ हुआ, जिसने आगे आने वाले समय में पृथक पर्वतीय राज्य आंदोलन को अपना नेतृत्व दिया। 14 स्पष्ट है कि असमिया भाषा को असम राज्य की राजभाषा बनाने की राज्य सरकार की कोशिश ने गैर असमिया भाषा भाषी को आंदोलित किया और उनमें राजनीतिक चेतना का संचार किया। परिणामस्वरूप उन्होंने भाषाई और सांस्कृतिक आधार पर अपने को संगठित किया और इस बिल का विरोध किया। आगे चलकर यह आंदोलन भाषाई और सांस्कृतिक समरूपता के आधार पर असम से पृथक स्वतंत्र राज्य निर्माण की माँग के आंदोलन में बदल गया। यहाँ यह ध्यान रखने की जरूरत है कि डॉ. सी.इ. जीनी इस घटना का उल्लेख मेघालय के संदर्भ में करती हैं। परंतु इस विधेयक का प्रभाव मेघालय के अतिरिक्त असम राज्य के अन्य गैर- असमिया भाषी सीमांत क्षेत्रों यथा- मिजोरम, नागालैण्ड और अरुणाचल प्रदेश पर भी समान रूप से पड़ रहा था। इसलिए इस घटना ने मिजोरम के लोगों को भी

राजनीतिक रूप से संगठित किया और मिजो भाषाई और सांस्कृतिक अस्मिता की पहचान की मांग और आंदोलन को गति मिली जिसने हिंदी के प्रचार-प्रसार के राह को अगले तीन दशकों तक कंटकाकीर्ण किया।

बदलती हुई जटिल परिस्थितियों में अकाल की विभीषिका का सामना करने के लिए गठित 'मिजो नेशनल फेमाइन फ्रंट' (1959 ई.) 'मिजो नेशनल फ्रंट' (एम.एन.एफ.- 1961 ई.) में बदल गया और पू लालडेंगा के नेतृत्व में मिजोरम की जनता ने असम और भारत से अलग होने का सशस्त्र स्वतंत्रता आंदोलन प्रारंभ किया। डॉ. सी.इ. जीनी लिखती हैं कि "मिजो जनों के लिए सन् 1959ई. का 'माउताम' (माउताम दुर्भिक्ष) राजनीतिक चेतना का कारण सिद्ध हुआ, साथ ही वे आगे नागा जाति के बलिदानों और तदजनित वरदानों (उपलब्धियों) से भी अवगत थे ही। नागा विद्रोहियों की भी इन उपलब्धियों ने मिजो युवा वर्ग को आकर्षित किया। फलतः वे अपने भू- भाइयों के भाग्योद्धार के लिए कुछ कर मर मिटने के लिए तैयार हो गए। फलतः 'मिजो दुर्भिक्ष सहायता फ्रंट' को 'मिजो नेशनल फ्रंट' में सन् 1961ई. में परिवर्तित कर दिया गया। उस फ्रंट का उद्देश्य मिजो हिल्स के लिए स्वतंत्रता और प्रभुसंपन्नता प्राप्त करना था।" दिग्भ्रमित मिजो युवकों का मूल उद्देश्य स्वतंत्र राष्ट्र की स्थापना करना था, जिसमें चीन मूल के मिजो निवासियों के रहने वाले मिजोरम, मणिपुर, वर्मा और पूर्वी पाकिस्तान के जिलों को शामिल करने की मंशा थी और इस सबके पीछे 'मिजो नेशनल फ्रंट' के नेता पू लालडेंगा का दिमाग कार्य कर रहा था। 28 फरवरी, 1966 को 'मिजो नेशनल फ्रंट' के सशस्त्र लड़ाकों ने पूरे मिजोरम के सरकारी संस्थानों पर आक्रमण कर उन्हें अपने कब्जे में ले लिया। इस आंदोलन को तत्कालीन पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) और चीन की सरकार तथा वर्मा की मिजो जनजातियों का अघोषित समर्थन प्राप्त था। आपात स्थिति को देखते हुए भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी को कठोर निर्णय लेना पड़ा और भारतीय सेना को स्थिति को संभालने के लिए तुरंत भेजा गया। डॉ. सी.इ. जीनी लिखती हैं "वस्तुतः इन समस्त विद्रोही मिजो गतिविधियों के पीछे 'मिजो नेशनल फ्रंट' के अध्यक्ष लालडेंगा की सूझबूझ ही कार्यरत थी। 1966ई, की फरवरी के अंतिम दिन 'मिजो नेशनल फ्रंट' ने सरकार के विरुद्ध विद्रोह कर दिया और आइजोल तथा लुङलेई के सरकारी कोषागार तथा अन्य कार्यालयों के साथ-साथ क्षेत्र के भीतरी भागों में भी आक्रमण किया। इन विद्रोही गतिविधियों से निबटने के लिए सरकार ने सुरक्षा दलों को भेजा जो छह मार्च को आइजोल और तेरह मार्च को लुङलेई पहुँचे। निस्संदेह विद्रोहियों को सुरक्षा सेना ने दबा दिया था, फिर भी नेशनल फ्रंट के कुछ स्वयंसेवियों ने सरकारी आदेशों का उल्लंघन और विद्रोही गतिविधियों को जारी रखा। इस प्रकार की विद्रोही गतिविधियाँ पाक और बर्मी मिजो के सहयोग से 1968ई. तक जारी रही। फलतः पूरे क्षेत्र को अशांत घोषित कर दिया गया और सुरक्षा सेनाओं को प्रशासनिक अधिकारियों की सहायता करने और शांति स्थापित करने के आदेश दे दिए गए थे। इन्हीं परिस्थितियों में मिजो क्षेत्र को असम राज्य से पृथक कर राज्य का दर्जा प्रदान कर दिया गया। 16

एक दशक से ज्यादा लंबे चले इस सशस्त्र आंदोलन और संघर्ष के उपरांत 21 जनवरी, 1972ई. को मिजोरम को केंद्र शासित प्रदेश का दर्जा प्राप्त हुआ। इसी दिन मिजो जनजातियों के निवास स्थान होने के कारण भारत सरकार के द्वारा इस प्रदेश का आधिकारिक नामकरण मिजोरम किया गया। डॉ. सी.इ. जीनी

लिखती हैं कि "सन् 1953ई. में कजल अली की अध्यक्षता में तीन सदस्यीय राज्य पुनर्गठन आयोग नियुक्त हुआ जिसके अन्य दो सदस्य सर्वश्री हृद्यनाथ कुंजरू और के.एम. पनिकर थे। अक्तूबर 1955ई, में राज्य पुनर्गठन सम्बन्धी अपनी आख्या प्रस्तुत की। ... उक्त संस्तुतियों से प्रेरित होकर मिजो विद्रोहियों की बढ़ती माँग के परिप्रेक्ष्य में सन 1972ई. में भारत सरकार ने मिजोरम राज्य की स्थापना को स्वीकार कर उसके पृथक अस्तित्व की घोषणा कर दी।"" और उसके डेढ़ दशक के बाद 1986ई. में भारत सरकार एवं 'मिजो नेशनल फ्रंट' के बीच हुए शांति समझौते के उपरांत 1987ई. में मिजोरम को पूर्ण राज्य का दर्जा दिया गया। इस प्रकार आज़ादी के लगभग चार दशकों के उपरांत मिजोरम पूर्ण राज्य बन पाया और यहाँ के लोग असम एवं केंद्र की असंवेदनशील व दमनकारी नीतियों से मुक्त होकर स्वराज की राह पर अग्रसर हो पाए, ऐसा मिजो विद्वानों की आम धारणा है। परंतु चार दशकों तक मिले उपेक्षा, अमानवीयता, असंवेदनशीलता, हिंसा, भ्रष्टाचार, लूट और कठोर दमन के दंश ने मिजो लोगों के दिलो दिमाग में असम एवं भारत के लोगों (वाई - विदेशी) के प्रति अविश्वास, नफरत एवं आक्रोश भरने का काम किया। श्री सी. कामलोवा बहुत सावधानी से लिखते हैं कि "यह वह समय था जब मिजो जनजातियों को राजनीतिक अवहेलना का शिकार होना पड़ा। राजनीति के अखाड़े में सौतेलेपन के दर्द को झेलना पड़ा।

अंग्रेजों की दासता से निकल कर अपने ही बल बूते पर देश की मुख्य धारा से जुड़ने की इच्छा, देश के लिए कुछ कर गुजरने की लालसा, तेल विहीन बाती की तरह धीरे-धीरे बुझने लगी, मुरझाने लगी। अंत में जाकर देश की मुख्य धारा से न जुड़ पाने के कारण इनका अंतस्तल आहत हुआ. इनके मर्म पर चोट लगी।" जिसकी परिणति असम एवं केंद्र की सरकार और वहाँ के लोगों के प्रति हिंसक प्रतिरोध में हुआ, जिसका एक रूप हिंदी का भी विरोध था। हिंदी भाषा की मिजो विदुषी और मिजो लोकसाहित्य की मर्मज्ञ सुश्री आर. ललथ्लामुआनी अपने आलेख 'राष्ट्रीय एकता का माध्यम- हिंदी' में अपने व्यक्तिगत जीवनानुभव को साझा करती हुई लिखती हैं कि "मेरा जन्म मिजोउ परिवार में हुआ है। ऐसे परिवार और समाज में हिंदी वातावरण बिलकुल ही नहीं था।" हिंदी भाषा की मिजो विदुषी और मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय, आईजोल की पूर्व प्राचार्या डॉ. एच. देङकिमी का पूरा बचपन भी इन्हीं परिस्थितियों में बीता था। इसलिए हिंदी भाषा में लिखित अपनी पुस्तक 'हिंदी और मिजोउ भाषा की व्याकरणिक कोटियों का व्यतिरेकी अध्ययन' के प्रावकथन की शुरुआत वे बचपन की उन्हीं कटु भावनाओं और परिस्थितियों की अभिव्यक्ति से करती हैं। वे भी स्पष्ट रूप से स्वीकार करती हैं कि "राजनीतिक उथल- पुथल के प्रभाव से बचपन में मैं हिंदी से बहुत घृणा करती थी। क्योंकि मिजोउरम अपनी स्वतंत्रता के लिए भारत सरकार के खिलाफ संघर्ष कर रहा था। जिसके कारण नफरत भाव भी मन में उत्पन्न होने लगा था। "20

मिजोरम में हिंदी भाषा के प्रति लोगों के इस नजरिए ने इसके प्रचार-प्रसार एवं विकास को बहुत प्रभावित किया। हिंदी को केंद्र की भाषा माना गया और हिंदी के विरोध को केंद्र का विरोध समझा गया। हिंदी का विरोध एक भाषा के रूप में कम और केंद्र के प्रतीक के रूप में ज्यादा किया गया, जैसा कि पूर्वोत्तर एवं दक्षिण भारत के कुछ अन्य राज्यों में भी देखने को मिलता है। कोई भी भाषा संप्रेषण का माध्यम होती

है। भारत की लगभग 80 प्रतिशत जनता हिंदी बोलती, समझती, पढ़ती और लिखती है। इसलिए भारत की मुख्य भूमि के लोगों से संवाद के लिए हिंदी का ज्ञान अनिवार्य है। परंतु हिंदी को केंद्र (की भाषा) का प्रतीक मान लिया गया और केंद्र के प्रतीक हिंदी का विरोध केंद्र का विरोध समझा गया, जिसकी वजह से मिजोरम में हिंदी का प्रचार-प्रसार एवं विकास बाधित हुआ। क्षेत्रीय राजनीतिक शक्तियों एवं हस्तियों ने अपनी क्षुद्र राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए हिंदी (भाषा) की बलि चढ़ा दी। परंतु आगे चलकर स्थितियाँ कुछ परिवर्तित होने लगी। मिजोरम के कुछ समझदार लोग यह समझ रहे थे कि संपूर्ण देश से जुड़ने के लिए हिंदी का ज्ञान अनिवार्य है और इसके ज्ञान से हर प्रकार का लाभ ही होगा। डॉ. एच. देङकिमी अपनी पुस्तक 'हिंदी और मिजो भाषा की व्याकरणिक कोटियों का व्यतिरेकी अध्ययन' के प्राक्कथन में आगे लिखती हैं कि "उसी स्वतंत्रता संघर्ष के समय मिजोरम में शिक्षा दीक्षा के क्षेत्र में भी समस्याएँ उत्पन्न होने लगी थीं। इसलिए मैं भी दूसरों के साथ शिलॉन्ग में पढ़ने गई। शिलॉन्ग में कुछ दिनों तक रहने के बाद परिस्थितियों ने मुझे हिंदी पढ़ने के लिए 'राष्ट्र भाषा हिंदी समिति', वर्धा, महाराष्ट्र में ढकेल दिया। ...वर्धा पहुँचने के बाद भी मैं हिंदी पढ़ने के लिए तैयार नहीं थी। एक महीने तक मैं हिंदी की वर्णमाला को भी याद नहीं कर पाई थी। मैं अचानक जाग गई, यह समझकर कि हिंदी हमारी राष्ट्र भाषा है, इसको जानकर मुझे लाभ मिलेगा। ... दो साल के बाद मैं मिजोरम लौट कर हिंदी अध्यापिका बन गई।" यद्यपि हिंदी ज्ञान से डॉ. एच. देङकिमी को तत्काल लाभ हुआ। 1973ई. में मिजोरम वापिस आते ही वे हिंदी शिक्षिका नियुक्त हो गई और नौ वर्षों के अनुभव के बाद 1982ई. में उनका पदस्थापन मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय, आईजोल में कर दिया गया, जहाँ आगे चलकर उन्होंने प्राचार्या के पद को भी सुशोभित किया। इसी प्रकार से 'श्री आर. जहलेइया मिजो जनजातीय लोगों में सबसे पहले हिंदी में स्नातकोत्तर (एम.ए.) की उपाधि प्राप्त करने वाले व्यक्ति थे। जो 1978 ई में गुवाहाटी विश्वविद्यालय से एम. ए, (हिंदी) की परीक्षा उत्तीर्ण करते हैं और जो आगे चलकर 1985ई. में मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय, आईजोल के प्राध्यापक और प्राचार्य बनते हैं। फिर भी मिजोरम के बहुसंख्यक जनता का भाव अब भी हिंदी के प्रति दोस्ताना नहीं हो पाया था। श्री जेट बी. छुङा 'मेरी अविस्मरणीय यात्रा' नामक संस्मरण में अपने हिंदी शिक्षक बनने की खुशी और मिजोरम में हिंदी के प्रति लोगों की भावनाओं का संकेत करते हुए लिखते हैं कि "1997 मई का महीना था। मुझे हिंदी अध्यापक की नौकरी मिल गई थी। उस गाँव (पद स्थापना) का नाम था लेंकी। मेरे परिवार वाले सभी खुश थे। पास पड़ोस के लोग मुबारकबाद देने आए। ... दो दिन की तैयारी के पश्चात् मैं लॅकी के लिए आईजोल से रवाना हुआ। करीब 280 किलोमीटर की लंबी यात्रा में मैं अकेला पहली बार जा रहा था। ... (बस में) इतने में एक सज्जन ने मुझसे पूछा- जवान लड़के, तुम कहाँ जा रहे हो? मैंने इतना कहा कि लॅकी जा रहा हूँ। मेरा इस प्रकार उत्तर देने का तात्पर्य था कि वस्तुतः हमारे मिजोरम में हिंदी को नहीं चाहते हैं। परिणामस्वरूप बात लंबी चौड़ी हो जाएगी। अतः मैं यह चाहता था कि ज्यादा सवाल न करें। वह चुप रह गया।" उस समय हालात हिंदी के बहुत अनुकूल नहीं थे। फिर भी वक्त एवं बदलते हालात के तकाजे ने मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार को कुछ हवा दी।

'असम राष्ट्र भाषा प्रचार समिति', गुवाहाटी के अंतर्गत 17 नवंबर, 1954ई. को जिस 'जौरम हिंदी प्रचार समिति' की स्थापना कोलासिब शहर में की गई थी। 1972ई. में असम राज्य से अलग होकर मिजोरम के केंद्र शासित प्रदेश बन जाने के बाद उसका नाम बदल कर 'मिजोरम हिंदी प्रचार सभा' कर दिया गया और इसका मुख्यालय भी आईजोल स्थानांतरित कर दिया गया। बदलती हुई परिस्थितियों में नए नाम के साथ सोसाइटी एक्ट के तहत इस संस्था का पंजीकरण कराया गया और 'श्री आर. जहलेइया को इसका प्रथम अध्यक्ष बनाया गया। 24 उसके बाद यह संस्था आज तक इसी नाम से कार्य कर रही है। वर्तमान में श्री आर बी ललमलसोम अध्यक्ष और श्री ललरेमजुआल सचिव का पद भार संभाल रहे हैं। मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार में इस संस्था की बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। इस संस्था के योगदान को रेखांकित करते हुए श्री सी. कामलोवा लिखते हैं- "मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय में अध्ययनरत और मिजोरम सरकार के अधीन माध्यमिक और उच्च माध्यमिक विद्यालयों में कार्यरत हिंदी अध्यापकों में से 85 प्रतिशत को हिंदी सिखाने और उन्हें वर्तमान पद के लिए तैयार करने में मिजोरम हिंदी प्रचार सभा का ही हाथ है, जो वास्तव में बहुत बड़ी उपलब्धि है। "25 आज भी यह संस्था अपने गुरुतर कर्तव्यों का निर्वहन पूरी ज़िम्मेदारी से कर रही है। आज भी यह संस्था मिजोरम के सभी जिलों में 'अपने 50 हिंदी प्रचार केंद्र, 8 हिंदी विद्यालयों और एक राष्ट्रभाषा महाविद्यालय के साथ मिजोरम के सुदूर गाँवों में हिंदी के प्रचार-प्रसार का सफल कार्य कर रही है। 26 और अपने प्रबोध, पारंगत और प्रवीण पाठ्यक्रमों के माध्यम से मिजोरम में हिंदी पठन पाठन को प्रोत्साहित कर रही है।

सहज विकास का दौर (1987ई. से अब तक):

मिजोरम में दो दशकों से ज्यादा चले हिंसक अलगाववादी आंदोलन ने मिजोरम में हिंदी के विकास को अवरुद्ध किया। लेकिन इस अलगाववादी आंदोलन के परिणाम स्वरूप जब 1972ई. में असम से अलग कर मिजोरम को केंद्र शासित प्रदेश बनाया गया और 1987ई. में मिजोरम को पूर्ण राज्य का दर्जा दिया गया, तब से यहाँ की परिस्थितियाँ तेजी से बदलने लगीं। तब से मिजोरम के प्रशासन, व्यापार और समाज में मिजो एकाधिकार की राजनीति प्रारंभ हुई। जो भावना अलगाववादी आंदोलन के दौरान उत्पन्न हुई थी उसके परिणाम स्वरूप स्वतंत्र राज्य बनते ही मिजोरम के प्रशासनिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन में मिजो एकाधिकार की प्रक्रिया अपनी पूर्णता की ओर तेजी से आगे बढ़ी और जैसे-जैसे मिजोरम में मिजो एकाधिकार की प्रक्रिया अपनी पूर्णता की तरफ आगे बढ़ती गई वैसे-वैसे मिजोरम में केंद्र के विरोध की भावना शांत होती चली गई और जैसे- जैसे मिजोरम में केंद्र के विरोध की भावना शांत होती गई, वैसे- वैसे हिंदी के विरोध का ताप भी मद्धिम पड़ने लगा। मिजोरम प्रशासनिक, आर्थिक, शैक्षणिक और चिकित्सीय आदि जरूरतों के लिए भारत पर बहुत ज्यादा निर्भर है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मिजोरम के लोगों को अपने प्रदेश से बाहर जाना पड़ता है। अपने प्रदेश से बाहर जाने पर स्वाभाविक रूप से उन का पाला हिंदी से पड़ता है। संपूर्ण देश के अलग- अलग क्षेत्रों की यात्रा करने पर वे सहज ही यह महसूस करने लगते हैं कि केवल मिजो भाषा के माध्यम से उन जगहों पर काम करना या वहाँ के लोगों

से सम्बन्ध बनाना कठिन कार्य है। तब स्वाभाविक रूप से हिंदी की संपर्क भाषा के रूप में महत्ता को वे महसूस करते हैं। राज्य के भीतर की राजनीति अपनी जगह पर है परंतु यह व्यावहारिक समझ ही आज मिजोरम में हिंदी के सहज विकास में सहायक सिद्ध हो रही है। तभी मिजोरम में हिंदी के महत्त्व को स्वीकार किया जाने लगा और उसे अपनाने की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। तब उसका स्वागत भी किया जाने लगा।

मिजोरम में हिंदी के विकास को यातायात के साधनों और आधुनिक संचार क्रांति ने भी गति प्रदान की। 1990ई. के आसपास से भारत में जो दूरसंचार की क्रांति हुई, उस दूरसंचार की क्रांति और रेडियो, टीवी, इंटरनेट, कंप्यूटर, मोबाइल तक भारत और मिजोरम के लोगों की सहज पहुँच ने मिजोरम को पूरे विश्व के काफी नजदीक ला दिया। ऐसी स्थिति में दूरसंचार के इन माध्यमों का प्रचार-प्रसार मिजोरम के घर- घर में भी हुआ और इन माध्यमों का इस्तेमाल करके मिजोरम के लोग भारत के अन्य हिस्से से सहजता से जुड़ने लगे। इन माध्यमों ने मिजोरम में टीवी चैनलों का प्रचार-प्रसार किया। इन टीवी चैनलों पर प्रसारित होने वाले हिंदी फिल्मों, गानों और सीरियलों की पहुँच मिजोरम के घर- घर तक हुई। छोटा भीम, कौन बनेगा करोड़पति, आपकी अदालत, कसौटी जिंदगी की, उड़ान, वीरा, सावधान इंडिया, क्राइम पेट्रोल, वंदे मातरम, नागिन आदि हिंदी सीरियल मिजो डबिंग के साथ मिजोरम के घर घर में देखे जाते हैं। दूरसंचार की इस क्रांति का लाभ लेने के लिए और हिंदी फिल्मों, गानों और सीरियलों से मनोरंजन पाने से मिजोरम के लोगों के दिलों में हिंदी की जो बर्फ दशकों से जमी हुई थी, वह धीरे-धीरे पिघलने लगी। अब मिजोरम के टैक्सियों में आमिर खान की पहली फिल्म 'कयामत से कयामत तक' के गाने 'पापा कहते हैं बेटा नाम करेगा...', 'गजब का है दिन सुनो तो जरा...' जैसे हिंदी गाने सुनाई देने लगे। मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार में दूरसंचार की क्रांति और जनसंचार के माध्यमों की भूमिका की तरफ इशारा करते हुए सुश्री आर. ललथ्लामुआनी लिखती हैं कि "स्टार प्लस के करोड़पति कार्यक्रम से भी लोग हिंदी सीखने की ओर जागृत हुए हैं। आकाशवाणी से प्रसारित 'हिंदी सबक' से भी कई लोग लाभान्वित हो रहे हैं। वे इन्हें नियमित रूप से सुनते हैं। उसे छोड़ना नहीं चाहते हैं। "2" जब स्वाभाविक रूप से मिजोरम में हिंदी की स्वीकार्यता बढ़ी। तब पूर्व के मिजो भावना के विपरीत कुछ ऐसे भी मिजो परिवार और अभिभावक देखने को मिलने लगे जिन्होंने सचेत रूप से अपने बच्चों को भारत के दूसरे शहरों और प्रदेशों में पढ़ने के लिए भेजा। ताकि उनके बच्चे शिक्षा प्राप्ति के साथ-साथ अपने देश से परिचित हो सकें और उसकी संपर्क भाषा हिंदी को सीख सकें और उसे आत्मसात कर सकें। श्री सी. कामलोवा स्पष्ट लिखते हैं कि "आज हालात बदले हैं। अधिक से अधिक लोग हिंदी सीखना चाहते हैं और तो और, सौम्य और शिक्षित परिवार के लोग भी अपने बच्चों को हिंदी सिखाने के लिए प्रेरित कर रहे हैं। हर कोई चाहता है कि थोड़ी बहुत हिंदी अवश्य सीखे। 28 हिंदी भाषा के प्रति मिजो जनजातियों के इस दृष्टि परिवर्तन के कारणों का श्री सी. कामलोवा आदर्शवादी उत्तर देते हुए लिखते हैं कि "यदि अतीत में यहाँ के जनजाति हिंदी विरोधी थे तो आज इनकी सोच में इतना बड़ा परिवर्तन कैसे आया? उत्तर स्पष्ट है। न यहाँ के लोग कभी हिंदी विरोधी थे, न आज ही हैं। हाँ, अतीत में हिंदी के प्रति इनके मन में नकारात्मकता का मुख्य कारण हिंदी के औचित्य को सही ढंग

से न समझ पाना, इनके गौरवपूर्ण इतिहास से अनभिज्ञता, इसके शब्द भंडार की विशालता के प्रति अज्ञानता आदि के साथ-साथ इसके साहित्य के मधुरतम भाव एवं गरिमा को न समझ पाना भी था।"

"परंतु आज वातावरण में परिवर्तन हुआ है। मिजो जनजाति हिंदी की वास्तविकता को समझने लगी हैं। इनके अंतस्तल में इस भाषा के प्रति प्यार एवं आस्था जो सुप्त अवस्था में थी, उपयुक्त वातावरण पाकर पल्लवित होने लगी है। जो निश्चय ही देश की एकता और अखंडता के लिए मील का पत्थर सिद्ध होगा।"

इस दौर में मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार में कई संस्थाओं की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। 'मिजोरम हिंदी प्रचार सभा' तो पूर्व से ही मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार के कार्य में सक्रिय थी। उसकी सक्रियता वर्तमान दौर में भी लगातार बनी रही। इसके अलावा '16 अक्तूबर 1975ई. को केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के अधीन केंद्र के सहयोग से आईजोल में 'मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण संस्थान' की स्थापना की गई जिसे 29 अगस्त, 1986ई. में मिजोरम सरकार ने 'मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय' में परिवर्तन करने की इच्छा जताई जिसे काफी विरोध के बाद केन्द्रीय हिंदी संस्थान, आगरा ने मंजूरी दे दी। यह महाविद्यालय लगातार 'हिंदी शिक्षक डिप्लोमा', 'हिंदी शिक्षक प्रवीण सर्टिफिकेट' और 'हिंदी शिक्षक पारंगत' पाठ्यक्रम (बी.एड. कोर्स) का सफल संचालन कर रहा है। 'अपनी स्थापना से लेकर 1998ई. तक यह महाविद्यालय आईजोल शहर के इलेक्ट्रिक वेङ में किराए के भवन में चलता रहा। जिसे बाद में आईजोल शहर के ही अपर रिपब्लिक वेङ में स्थानांतरित कर दिया गया। कई वर्षों के अथक प्रयास के बाद केंद्र सरकार द्वारा संरक्षित और संचालित हिंदी भाषा योजना के अंतर्गत महाविद्यालय को भवन निर्माण हेतु 1997 ई में धन राशि की प्राप्ति हुई और मिजोरम राज्य सरकार के सहयोग से आईजोल शहर के दुरत्लाङ क्षेत्र में महाविद्यालय के अपने भवन और परिसर का सपना साकार हो पाया। 2000ई. से महाविद्यालय दुरत्लाङ के अपने इसी परिसर से हिंदी के पाठ्यक्रमों का सफल संचालन कर रहा है। आज भी मिजोरम में हिंदी के अध्ययन अध्यापन और प्रचार-प्रसार में यह महाविद्यालय महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। 'मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय' के पूर्व प्राचार्यों : डॉ. तेज़ नारायण लाल, डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल, डॉ. के.टी. विश्वनाथ, डॉ. राम कृपाल कुमार, डॉ. पीताम्बर, श्री आर. जहलेइया, डॉ. सी. चोङथनमोई, डॉ. ओम प्रकाश शुक्ला, डॉ. शिव कुमार, डॉ. एच. ललदेङ किमी, डॉ. लुइस हाउहनार (वर्तमान प्राचार्य); प्राध्यापकों श्री सी. कामलोवा, प्रो.ई. सी. जिन्नी, श्रीमती डूरछीडी, श्रीमती जया मुखर्जी, श्रीमती बिमला चौहान, डॉ. दिनेश कुमार द्विवेदी, डॉ. हबिल कीरो, सुश्री आर. ललथ्लामुआनी, श्री वनललफेला, डॉ. ललमुआनओमा साइलो, डॉ. अजय कुमार रणजीत, श्री ललछुआनओमा, डॉ. मरीना ललथ्लामुआनी, डॉ. जूडी ललएङवारी, श्रीमती लललोमजुआली हौहार, श्री ललरेमसियामा, डॉ. एलिजावेथी, श्रीमती वनललपारी चिंजन आदि मिजोरम में हिंदी के अध्ययन, अध्यापन और प्रशिक्षण से जुड़े रहे हैं और हिंदी के प्रचार-प्रसार में अपनी महती भूमिका का निर्वहन कर रहे हैं। मिजोरम के हिंदी के ज्यादातर स्कूल शिक्षक 'मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय' से ही प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं. जो इन शिक्षकों की सक्रियता से ही संभव हो पाती है।

वर्तमान में मिजोरम में लगभग 318 उच्च विद्यालय हिंदी शिक्षक और 518 माध्यमिक विद्यालय हिंदी शिक्षक (कुल हिंदी शिक्षक-836) कार्यरत हैं। 2009 में केंद्र प्रायोजित योजना के तहत लगभग 1300 हिंदी शिक्षकों की नियुक्ति की गई थी। 2017-18 में यह योजना समाप्त हो गई। प्रदेश सरकार ने इन शिक्षकों को नियमित करने की कोई इच्छा शक्ति नहीं दिखाई. परिणाम स्वरूप इन सभी शिक्षकों की नियुक्तियों को रद्द कर दिया गया। लेकिन 2021 में केंद्र प्रायोजित योजना के तहत कुल 541 नए हिंदी शिक्षकों की नियुक्ति की गई है, जिसमें से 114 उच्च विद्यालय हिंदी शिक्षक हैं तो 427 माध्यमिक विद्यालय हिंदी शिक्षक हैं। एक बार फिर अक्तूबर 2021 ई. में केंद्र प्रायोजित योजना के तहत लगभग 300 नए हिंदी शिक्षकों की नियुक्ति के लिए आवेदन आमंत्रित किए गए हैं। उम्मीद है कि जल्द ही मिजोरम सरकार इन हिंदी शिक्षकों की नियुक्ति की प्रक्रिया भी पूर्ण कर लेगी जिससे मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार को नई गति और ऊँचाई प्राप्त होगी।

त्रिभाषा सूत्र के अंतर्गत मिजोरम के स्कूलों में अनिवार्य विषय के रूप में हिंदी की पढ़ाई कक्षा 5 से 8 तक की जाती है। परंतु अन्य विषयों से अलग इसमें अंक नहीं ग्रेड दिया जाता है और परीक्षा फल में इसके अंक शामिल नहीं किए जाते हैं। कक्षा 9 एवं 10 में आधुनिक भारतीय भाषा (MIL) के रूप में वैकल्पिक विषय के रूप में हिंदी पढ़ाई जाती है। कक्षा 11 एवं 12 में हिंदी की पढ़ाई नहीं होती है। मिजोरम के स्कूल पाठ्यक्रम में हिंदी को केवल व्यावहारिक भाषाई ज्ञान प्राप्त करने के उपयोगितावादी उद्देश्य की पूर्ति के लिए रखा गया है। डॉ. सी.इ. जीनी अपनी पुस्तक में उल्लेख करती हैं कि "शुद्ध उपयोगिता के दृष्टिकोण से ही वहाँ शिक्षा विभाग ने हिंदी की पढ़ाई की व्यवस्था की है न कि किसी बड़े प्रयोजन की पूर्ति के लिए जैसा साहित्य का अध्ययन अध्यापन या किसी अन्य भावना से प्रेरित होकर। शिक्षा विभाग यह भली भांति जानता है कि विशाल भारत के एक सुदूर कोने में अवस्थित अपने छोटे से प्रदेश की जनता का सर्वांगीण विकास तभी संभव हो सकता है, जब वह मुख्य धारा के लोगों के सतत संपर्क में बना रहे। यह सतत संपर्क तभी संभव हो सकता है जब वह अधिसंख्यक लोगों के द्वारा प्रयुक्त हिंदी भाषा का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करे। इसी एक व्यावहारिक ज्ञान को प्राप्त करवाने के अपने स्पष्ट उद्देश्य को ध्यान में रखकर मिजोरम के शिक्षा विभाग ने अपने स्कूली हिंदी पाठ्यक्रम को भाषा केंद्रित बनाया है न कि अन्य अधिकांश अहिंदी भाषी राज्यों के समान साहित्य केंद्रित या बहु- उद्देश्य केंद्रित।" इसलिए इस पाठ्यक्रम में एकमात्र भाषा और उसके वार्तालाप के ज्ञान पर जोर है।

इसके साथ ही यह भी ध्यान देने की बात है कि 2016ई. से मिजोरम राज्य सरकार के स्कूलों में प्राथमिक स्तर से ही शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी को बना दिया गया है। आशा है कि नई शिक्षा नीति-2020 से इस में परिवर्तन आएगा। मिजोरम बॉर्ड के स्कूलों के अलावा यहाँ दो केन्द्रीय विद्यालय, एक नवोदय विद्यालय और एक सैनिक स्कूल भी है जिसमें हिंदी पढ़ाई जाती है।

2009ई. से गवर्मेंट आइजोल कॉलेज, आइजोल और कमला नगर कॉलेज, चोडते में भी स्नातक स्तर पर हिंदी की शिक्षा दीक्षा प्रारंभ हुई। डॉ. रतन कुमार, डॉ. रेबेक्का ललह्मडाइही, डॉ. ललरिनकिमी, डॉ. कैथी रोलुपुई, श्री हरि प्रसाद और डॉ. धीरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव जैसे युवा प्राध्यापक मिजोरम के महाविद्यालयों में

छात्रों को स्नातक स्तर पर हिंदी की शिक्षा प्रदान कर रहे हैं और मिजोरम के युवाओं में हिंदी के प्रति जागरूकता बढ़ा रहे हैं। 2010ई. में मिजोरम विश्वविद्यालय, आइजोल में हिंदी विभाग की स्थापना हुई और 2011ई. से यहाँ स्नातकोत्तर एवं पीएच.डी. पाठ्यक्रम प्रारंभ हुआ। मिजोरम विश्वविद्यालय का हिंदी विभाग आज मिजोरम में हिंदी के उच्चतर अध्ययन- अध्यापन और शोध का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यहाँ से कई सारे छात्र स्नातकोत्तर, एम.फिल. और पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त कर मिजोरम के विभिन्न क्षेत्रों में अध्ययन-अध्यापन का कार्य कर रहे हैं और मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार की अलख जगाए हुए हैं। मिजोरम विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के प्राध्यापक प्रो. संजय कुमार, प्रो. सुशील कुमार शर्मा, डॉ. सुषमा कुमारी, डॉ. अमिष वर्मा और डॉ. अखिलेश कुमार शर्मा मिजोरम में हिंदी के उच्चतर अध्ययन अध्यापन और शोध को गति और दिशा प्रदान कर रहे हैं।

उपर्युक्त प्राध्यापकों और शिक्षकों के अलावा बहुत सारे अन्य सहृदय भी हिंदी की सेवा और उसके प्रचार-प्रसार के साथ-साथ हिंदी में सृजनात्मक साहित्य लेखन के क्षेत्र में सक्रिय हैं जिसमें से पद्मश्री सी. कामलोवा, डॉ. सी.इ. जीनी, डॉ. जेन्नी मलसोमडोकिमी, डॉ. जेन्नी ललडिङलियानी, डॉ. वी.आर. रालते, श्री डेविड के. अजयु आदि के नाम महत्त्वपूर्ण हैं।

मिजोरम में हिंदी के विकास और प्रचार-प्रसार की स्थिति को समझने के लिए उपयुक्त परिस्थितियों और वस्तुस्थिति का ज्ञान अपेक्षित है। तमाम बाधाओं और चुनौतियों को पार करते हुए हिंदी धीरे-धीरे ही सही मिजोरम में अपने कदम सतत आगे बढ़ा रही है। मिजोरम में हिंदी के प्रचार-प्रसार की स्थिति बहुत उत्साह वर्धक तो नहीं है पर निराश होने की भी आवश्यकता नहीं है। पिछले तीन दशकों में स्थितियाँ काफी तेजी से बदली हैं जो हिंदी के सहज प्रचार-प्रसार में सहायक हैं। उम्मीद है कि नई शिक्षा नीति-2020 के पूर्ण रूप से लागू होने पर स्थानीय मिजो भाषा के साथ-साथ हिंदी का भी तेजी से विकास होगा। श्री सी. कामलोवा मिजोरम में हिंदी के सुगम प्रसार हेतु भविष्य की चुनौतियों की तरफ ध्यान आकृष्ट करते हुए लिखते हैं कि- "अतः मिजोरम में हिंदी के प्रति राज्य एवं केंद्र दोनों ही सरकारों को सोच की दरिद्रता के चक्रव्यूह को तोड़ना होगा, भेदना होगा, उदारतापूर्ण दृष्टिकोण अपनाने होंगें। यदि ऐसा होता है तो आगामी दस वर्षों में मिजोरम हिंदी- ज्ञान, प्रयोग और अन्य प्रदेशों में इसके प्रचार हेतु आत्मनिर्भर हो जाएगा, जो निश्चय ही देश की एकता एवं अखंडता के लिए रामबाण सिद्ध होगी। "33

संदर्भ सूची :

1. डॉ. सी.इ. जीनी, 'पूर्वांचल प्रदेश में हिंदी भाषा और साहित्य', पृष्ठ- 19

2. डॉ. सी चोङ थनमोई, मिजोउ तथा हिंदी के वाक्य- विन्यास की विशेषताएँ (तुलनात्मक अध्ययन), पृष्ठ 11

3. डॉ. सी.इ. जीनी, 'पूर्वांचल प्रदेश में हिंदी भाषा और साहित्य', पृष्ठ- 19

4. वही, पृष्ठ- 53

5. डॉ. एच. देङकिमी, हिंदी और मिजोउ भाषा की व्याकरणिक कोटियों का व्यतिरेकी अध्ययन, पृष्ठ- 22 6. वही, पृष्ठ-22

7. डॉ. सी.इ. जीनी, 'पूर्वांचल प्रदेश में हिंदी भाषा और साहित्य', पृष्ठ- 53-54

8. वही, पृष्ठ- 54

9. सी. कामलोवा, 'मिजोरम में हिंदी सोच की दरिद्रता', संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका 2001, पृष्ठ 16-17

10. डॉ. सी.इ. जीनी, 'पूर्वांचल प्रदेश में हिंदी भाषा और साहित्य', पृष्ठ- 55

11. वही, पृष्ठ 169

12. वही, पृष्ठ- 54

13. सी. कामलोवा, 'मिजोरम में हिंदी सोच की दरिद्रता'. संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका 2001, पृष्ठ 17

14. डॉ. सी.इ. जीनी, 'पूर्वांचल प्रदेश में हिंदी भाषा और साहित्य', पृष्ठ- 33

15. वही, पृष्ठ- 21

16. वही, पृष्ठ- 23

17. वही, पृष्ठ- 32

18. सी. कामलोवा, 'मिजोरम में हिंदी सोच की दरिद्रता', संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका- 2001, पृष्ठ- 18

19. आर. ललथ्लामुआनी, 'राष्ट्रीय एकता का माध्यम- हिंदी', संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका 2001, पृष्ठ- 42

20. डॉ. एच. देङकिमी, हिंदी और मिजोउ भाषा की व्याकरणिक कोटियों का व्यतिरेकी अध्ययन, पृष्ठ- 22

21. वही, पृष्ठ- 22

22. आर. ललथ्लामुआनी, 'राष्ट्रीय एकता का माध्यम- हिंदी', संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका 2001, पृष्ठ- 42

23. श्री जेट बी. छुङा, 'मेरी अविस्मरणीय यात्रा', संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका- 2001, पृष्ठ- 34

24. आर. ललथ्लामुआनी, 'राष्ट्रीय एकता का माध्यम- हिंदी', संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका 2001, पृष्ठ- 42

25. सी. कामलोवा, 'मिजोरम में हिंदी सोच की दरिद्रता', संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका- 2001, पृष्ठ 18

26. वही, पृष्ठ- 18

27. आर. ललथ्लामुआनी, 'राष्ट्रीय एकता का माध्यम- हिंदी', संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका 2001, पृष्ठ- 42

28. सी. कामलोवा, 'मिजोरम में हिंदी सोच की दरिद्रता', संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका 2001, पृष्ठ- 18

29. वही, पृष्ठ- 18

30. वही, पृष्ठ- 18

31. डॉ. सी चोङथनमोई, प्राचार्या का विवरण, संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका 2001. पृष्ठ 18

32. डॉ. सी.इ. जीनी, 'पूर्वांचल प्रदेश में हिंदी भाषा और साहित्य', पृष्ठ- 54

33. सी. कामलोवा, 'मिजोरम में हिंदी सोच की दरिद्रता', संपा. शिव कुमार, मिजोरम हिंदी प्रशिक्षण महाविद्यालय रजत जयंती स्मारिका 2001, पृष्ठ 19